वेदान्त आश्रम की मासिक ई - पत्रिका

वेदान्त पीयूष

वर्ष २३ जून - २०२३ प्रकाशन - ०६

वेदान्त पीयूष

वेदान्त मिशन की मासिक हिन्दी मासिक पत्रिका

जून 2023 / वर्ष 23 / प्रकाशन 06

प्रकाशक

वेदान्त आश्रम,

ई - २९५०, सुदामा नगर, इन्दौर - ४५२००९; मध्यप्रदेश

Web : https://www.vmission.org.in

email : vmission@gmail.com

सम्पादिका :

स्वामिनी अमितानन्द सरस्वती

विषय सूचि

ॐ
सदाशिवसमारम्भाम्
शंकराचार्य मध्यमाम्
अस्मदाचार्य पर्यन्ताम्
वन्दे गुरु परम्पराम्

अज्ञानान्मानसोपाधेः कर्तृत्वादीनि चात्मनि।
कल्प्यन्तेऽम्बुगते चन्द्रे चलनादि यथाम्भसः॥

(श्लोक - २२)

जैसे अज्ञान के कारण जल की चंचलता आदि उसमें प्रतिबिम्बित चन्द्रमा की मान ली जाती है, वैसे ही मन के कर्तापन आदि उपाधियां अज्ञानवशात् आत्मा के गुण मान लिये जाते है।

सन्देश

कर्म से मन शुद्ध होकर
ज्ञान का द्वार खोलता है।

सन्देश

साधारणतः हर व्यक्ति स्वयं को कर्ता-भोक्ता जीव मानकर बाह्य जगत में विविध उपलब्धि हेतु सतत चेष्टा करता रहता है। अज्ञान में रहते हुए कर्म में अत्यधिक विश्वास होता है कि उसीसे हम विविध उपलब्धियों के माध्यम से धन्य व कृतार्थ हो जाएंगे और वही हमें मुक्ति प्रदान करेगा। हमारी संकुचिता व अपूर्णता सत्य और स्वाभाविक ही है और उसे किसी कर्म का आश्रय लेकर दूर करने की निरन्तर चेष्टा करते रहना ही जीवन है। उसका यह न केवल विश्वास है, अपितु अपने अप्रामाणिक व झूठे ज्ञान के अभिमान का सूचक है। यह अभिमान ही जिज्ञासा के उदय में बाधा है। उससे वह सतत बहिर्मुख बना रहता है। यह अभिमान अपनी संकुचित जीवभाव में दृढ़ता, तथा अपने से पृथक् कर्मक्षेत्रादि का अर्थात् द्वैत का अस्तित्व बनाए रखने का हेतु बनता है। जीव की संकुचित अस्मिता से युक्त होकर जीना ही संसार के हेतुरूप मोह का सूचक है। उससे वह सतत अन्तहीन संसरण को प्राप्त करता है। जब कि पूर्णता प्राप्ति की स्वाभाविक इच्छा ही दर्शाता है कि यह सम्भव है। अपने बारे में अज्ञान व अप्रामाणिक निश्चय के कारण ही आज अपूर्णता अर्थात् बन्धन की अनुभूति हो रही है। समस्त शास्त्र का उद्घोष है कि हम ही पूर्ण है; अज्ञानवश की गई कल्पना के कारण बन्धन की अनुभूति हो रही है। अतः पूर्णता को कहीं से प्राप्त नहीं करना है।

कर्म का प्रयोजन अप्राप्त की प्राप्ति कराना है। जो भी कर्म से प्राप्त होता है, वह नश्वर, अस्थायी होता है। मुक्ति व पूर्णता का अभिप्राय ही वह किसी देश, काल, वस्तुसापेक्ष, नैमित्तिक नहीं है। अतः आवश्यक है कि कर्म के सामर्थ्य, उसकी आवश्यकता व उसकी सीमा का बोध हो। जो भी धर्माचरण युक्त कर्म करते हुए, कर्म को कर्मयोग बनता है वह शान्त, सूक्ष्म, विचारशील व अन्तर्मुख होता है तथा कर्म के सामर्थ्य और दोष को जानकर उससे मुक्त होकर ज्ञान के लिए समर्पित होता है और वही शास्त्र का गुरुमुख से श्रवण करके मुक्ति का प्रसाद पा लेता है।

वेदान्त लेख
अहम् ब्रह्मास्मि

कर्मफल

कर्मफलासक्ति और उसकी चिन्ता सतत सन्तप्त करती है और पतन का कारण बनता है। अतः यह विचारणीय है कि कैसे कर्मफल की चिन्ता व कर्मफलासक्ति से मुक्त हुआ जा सकता है? अज्ञान में विद्यमान व्यक्ति की मान्यता अनुसार उसकी सुख और सुरक्षा का आधार अपने से पृथक् बाह्य वस्तु, व्यक्ति और परिस्थिति होता है। यह अपने से पृथक् किसी अन्य देश और काल में होने की वजह से कर्म का आश्रय लेकर कर्मफल के रूप में प्राप्त करना होता है। जब हमारे सुख और सुरक्षा कर्मफल पर ही आश्रित है, तो कर्मफल हमारे लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है।

कर्म भी हमें ही करना है और कर्मफल भी हमें ही प्राप्त करना है। किन्तु इस प्रक्रिया में यह भी धारणा होती है कि हमारे कर्म करने की वजह से ही हमें कर्मफल प्राप्त होता है अर्थात् कर्मफल के हम ही जनक है। सत्य यह है कि हम कर्म करने में स्वतंत्र है, उसका फल हमें कर्मफलदाता जगदीश्वर से प्राप्त होता है। अपने अन्दर इस विषयक श्रद्धा की दृढ़ता की आवश्यकता है। गीता में स्वयं भगवान् बताते हैं कि, 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।' 'तुम्हारा कर्म में ही अधिकार है अर्थात् तुम कर्म करने में स्वतंत्र हो, फल उत्पन्न करने की स्वतंत्रता तुम में नहीं है।

भगवान कर्मफल कैसे प्रदान करते हैं? जीवन की प्रत्येक परिस्थिति हमारे किसी न किसी कर्म का फल होती है। उस परिस्थिति के निर्माण में हमारा कर्म एक छोटे से योगदान रूप होता है। यदि व्यापकता और गहराई से विचार करें तो यह दीखता है कि 'केवल' हम उसके लिए उत्तरदायी नहीं है। कहावत है कि 'किसी एक फल के निर्माण में पूरे ब्रह्माण्ड का योगदान होता है।' हमें कर्मफल के रूप में प्राप्त परिस्थिति के निर्माण में भी हमारा योगदान तो कुछ अंशमात्र होता है। पूरी समष्टि जब अनुकुल होती है, तब कर्म का फल हमें प्राप्त होता है। जगदीश्वर वही है जो किसी परिस्थिति के निर्माण में पूरे ब्रह्माण्ड को नियंत्रित करते हैं। इसका अभिप्राय है कि जगदीश्वर की कृपा से ही हमें अपने कर्म का फल प्राप्त होता है। इस तथ्य को यदि अच्छी प्रकार से समझते हैं तो कर्मफल की चिन्ता से मुक्त होकर पूरी उर्जा कर्म में समर्पित करते हुए कर्मफल की चिन्ता से मुक्त हो सकते हैं। यदि हमने कर्म अच्छी तरह समग्रता से किया है तो ईश्वर हमें फल अवश्य देंगें।
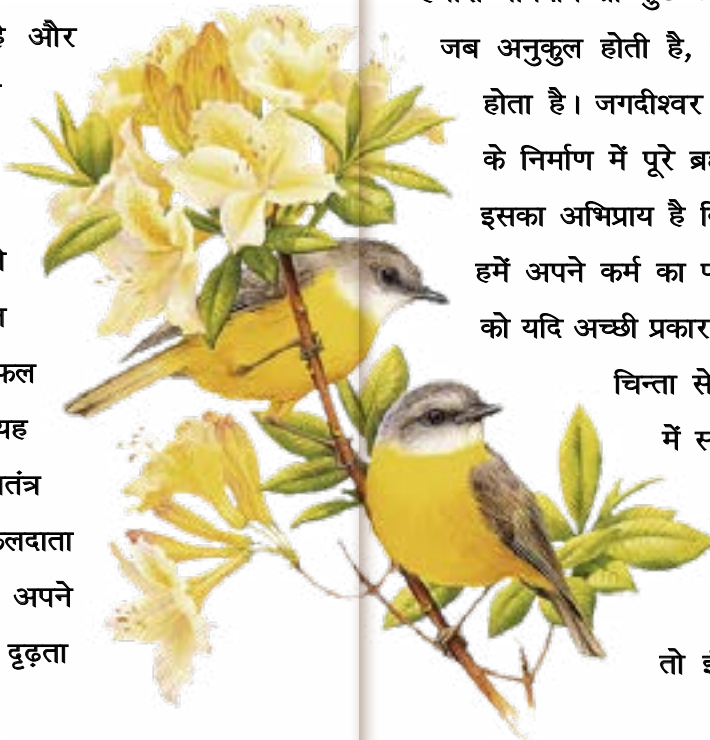
कर्मफल

इस प्रगाढ़ श्रद्धा से युक्त होकर अब समस्त उर्जा कर्म में लगाई जा सकती है। ईश्वर से प्राप्त कर्मफल में अब फल की बुद्धि गौण होकर प्रसादबुद्धि का समावेश होने लगता है। यह प्रसादबुद्धि ही अपनी पसंद-नापसंद रूप राग-द्वेष से मुक्त करती है। ईश्वर का प्रसाद कृतज्ञता व धन्यता के साथ ग्रहण होता है।

जब कर्म पूरी समग्रता व वर्तमान में पूर्ण उपलब्धता के साथ करने लगते है, तो और भी अनेकों तथ्य उजागर होकर अनुभव में आते है। पूर्णतया उपलब्धता के साथ समग्रता से कर्म करने पर एक विलक्षण आनन्द की अनुभूति होती है। यह ऐसा आनन्द होता है, जिसके सामने कर्मफल का सुख गौण हो सकता है। यह सुख हमें कर्मफल की आसक्ति से मुक्त करता है। जब यह दीखता है कि स्वयं जगदीश्वर हमें कर्म का फल दे रहे हैं, तो उनके प्रति कृतज्ञता व धन्यता से युक्त होने लगते हैं। उनके प्रेमी अर्थात् भक्त बनकर जीने लगते है। इस प्रकार भक्ति का अध्याय आरम्भ होने लगता है। अब कर्म में अपने लिए कर्मफल की गणित गौण होने लगती है और ईश्वर की प्रसन्नता अधिक महत्वपूर्ण होने लगती है। ऐसे में कर्म प्रभु के चरणों में नैवेद्य के रूप में अर्पित हाने लगता है। अब कर्म में निष्कामता का समावेश होने लगता है। स्वकेन्द्रिता से मुक्त होते जाते है और गहन संवेदना से युक्त होकर अन्य सब के योगदान व सेवा को देखने में सक्षम होते जाते है। यह आत्मीयता का विस्तार करता है और कर्म में सतत निष्कामता समाविष्ट होती जाती है। इस प्रकार कर्मफल के चंगूल से मुक्त होकर धन्यता का जीवन आरम्भ होता है। मन सूक्ष्म, संवेदनशील व विचारशील होता है।

कर्मफलासक्ति व तज्जनित दोष से मुक्ति का एक और तरीका है; वह है स्वधर्म पालन। अपने वर्ण और आश्रम के अनुरूप अपने धर्म का पालन करना। इस स्वधर्म विषयक चर्चा आगामी अंक में करेंगे।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन

मानसं शामयेत्तस्मात्
ज्ञानेनाग्निमिवाम्बुना।
प्रशान्ते मानसे ह्यस्य
शारीरमुपशाम्यति।।

भावार्थ : जिस प्रकार जल से अग्नि को शान्त किया जाता है, वैसे ही ज्ञान के द्वारा मानसिक सन्ताप को शान्त करना चाहिये। मानसिक सन्ताप शान्त होने से शारीरिक सन्ताप भी शान्त होने लगता है।

श्रुतिस्मृतिपुराणानां आलयं करुणालयम्।
नमामि भगवत्पादं शंकरं लोकशंकरम्॥

देहात्मधीवद् ब्रह्मात्म
धी दार्ढ्ये कृतकृत्यता।
यदा तदायं म्रियतां
मुक्तोऽसौ नात्र संशयः।।

जब अज्ञानकाल की देहात्मबुद्धि की ही तरह ब्रह्मात्मबुद्धि सहज हो जाए, तब यह मनुष्य जीवन्मुक्त हो कृतकृत्य हो जाता है। जब भी उसके प्रारब्ध समाप्त होते हैं, वह विदेहमुक्त हो ब्रह्म में लीन हो जाता है।

लघु वाक्यवृत्ति

आचार्य इस ग्रन्थ का समापन करते हुए अन्तिम श्लोक में जीवन्मुक्त की अवस्था के बारे में बता रहे हैं। जिस प्रकार ब्रह्म को परिभाषित नहीं किया जा सकता है, उसी प्रकार जीवन्मुक्त को भी परिभाषित नहीं किया जा सकता है। उनको समझना क्षुद्र बुद्धि की सीमा के दायरे में नहीं होता है। अत: आचार्य हमारी आज की अनुभूति और ज्ञान को समक्ष रखकर जीवन्मुक्त की स्थिति को दर्शा रहे हैं।

हमारे प्रत्येक कार्य उसके पीछे विद्यमान अपने तथा अन्य के बारे में निश्चय के ही द्योतक होते है। हमारा व्यवहार ही हमारे जीवनदर्शन को द्योतित करता है। अज्ञानी व्यक्ति अपने बारे में क्या निश्चय और ज्ञान रखता है, वह प्रत्यक्ष ज्ञात नहीं होता है, किन्तु उनके जीवन में समस्याएं, पीडाएं, हर्ष-शोक, तथा संसरण सतत होता रहता है, उसके पीछे कारण उसका मोहात्मक निश्चय होता है, यह देखा जा सकता है।

अज्ञानी स्वयं को जन्मादि से युक्त मानकर षड्विकारों से प्रभावित व भयभीत होता है। स्वस्थता और अस्वस्थता उसे हर्षित और शोकाकुल करने की निमित्त बनती है। उसके पीछे उसका स्पष्ट मोहात्मक दृढ़ निश्चय है कि वह स्वयं को देह मान रहा है। उसका अपने कुल, वर्ण, सामर्थ्य आदि की विशिष्टता का अभिमान जो स्वाभिमान तथा अभिमान का हेतु बनते हैं, यह औपाधिक विशिष्टता के प्रति 'अहं बुद्धि' और 'मम बुद्धि' का परिचायक है।

अनात्मबुद्धि में आत्मबुद्धि विषयक निश्चय इस प्रकार कार्य की तरह अभिव्यक्त होते है। देहादि उपाधि मैं हूं तथा उसके विकार, सामर्थ्यादि विशिष्टताएं हमारे है, यह अपरोक्ष निश्चय है। यह निश्चय इतना दृढ़ होता है,

लघु वाक्यवृत्ति

कि यही भविष्य की योजनाएं, पुरुषार्थ के निश्चय का आधार बनता है, तथा सुख-दुःख, मान-अपमान, सफलता-असफलता आदि का मापदण्ड और हेतु बन जाता है। उसके पीछे अज्ञानजनित यह निश्चय है कि हम एक क्षुद्र अस्मिता से युक्त जीवमात्र है।

आचार्य बताते हैं कि जितना दृढ निश्चय अज्ञानी का अनात्म में आत्मविषयक होता है। उतना ही दृढ़ और अपरोक्ष ज्ञान, तथा तज्जनित निश्चय ज्ञानवान का अपनी ब्रह्मस्वरूपता के बारे में होता है। वह देहादि के धर्म से, विशिष्टता और सामर्थ्य से गर्वान्वित तथा हर्षित और शोकाकुल नहीं होता है, क्योंकि यह देह हम नहीं है, तथा उसकी विशिष्टता, सामर्थ्य आदि हमारे नहीं है, यह स्पष्टरूप से अपरोक्षतः जानता हैं। देह में रहते हुए उसके समस्त धर्म से असंग है, हम सच्चिदानन्द स्वरूप ब्रह्म है। हमारा होना देहादि उपाधियों पर अथवा बाहरी उपलब्धियों पर आश्रित नहीं है। क्योंकि हम एक देहादि में सीमित, क्षुद्र जीव नहीं है। किन्तु समस्त ब्रह्माण्ड को अपने अन्दर समाएं हुए, एक अखण्ड, अलिप्त चेतन सत्ता हैं। यह सब हम में जल में लहरों की तरह आवागमन को प्राप्त होता है। इस प्रकार जीवन्मुक्त का अपने बारे में अपरोक्ष ज्ञान है। ऐसी सहज अस्मिता जिसकी भी हो, वह निःसन्देह यहीं रहते रहते मुक्त ही है। साथ ही शरीर के प्रारब्ध की समाप्ति पर, देहपात होने पर वह विदेहमुक्त ही है। उसके संसार में आवगामन की सम्भावना पूर्णतः समाप्त हो जाती है।

इति लघुवाक्यवृत्ति ग्रन्थ समाप्तः।

ओम् तत्सत्।।

तनुं त्यजतु वा काश्यां श्वपचस्य गृहेऽथ वा।
ज्ञानसम्प्राप्तिसमये मुक्तोऽसौ विगताशयः।।
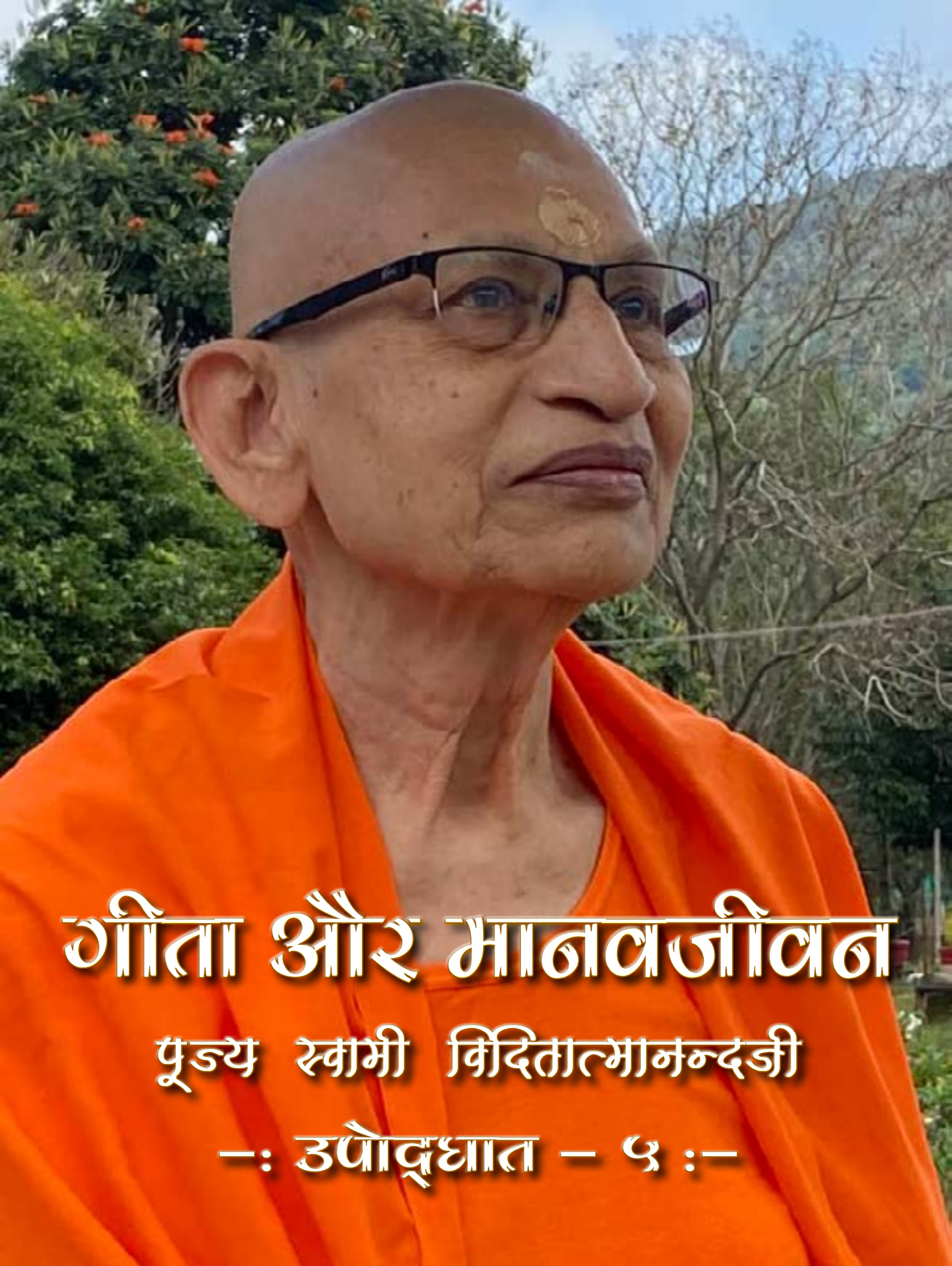
गीता और मानवजीवन
पूज्य स्वामी विदितात्मानन्दजी
-: उपोद्‌घात - ५ :-

गीता और मानवजीवन

जीवनरथ का संचालन :
कुरुक्षेत्र में अर्जुन ने अपने रथ की लगाम श्रीकृष्ण को सौंप दी और भगवान ने उनके रथ का संचालन किया। युद्ध करे या न करे इन दो विकल्पों के बीच में निर्णय करना अर्जुन के लिए अत्यन्त कठिन हो गया था। प्रत्येक मनुष्य को भी जीवन में बारबार दो मार्ग के मध्य में चयन करना होता है। यह दो मार्ग हे - श्रेय और प्रेय। एक श्रेयमार्ग और दूसरा है प्रेयमार्ग। उसमें से प्रेयमार्ग अत्यन्त आकर्षक है, इन्द्रियसुख का अनुभव देनेवाला है। इसलिए मनुष्य सामान्यत: उसका चयन करता है। यह प्रेयमार्ग बहिर्मुखता का मार्ग है, विषयों के उपभोग का मार्ग है। विषय और इन्द्रियों के संयोग से सुख मिलता हुआ प्रतीत होता है, उसके कारण सामान्य मनुष्य को यह मार्ग प्रिय लगता है, इसलिए वह उसे पसंद करता है। यह मार्ग प्रारम्भ में अमृत समान लगता है, किन्तु अन्तत: वह विष में, कडवाहट में परिणत होता है। इससे विपरीत श्रेयमार्ग यह धर्म का मार्ग है, संयम का मार्ग है। प्रारम्भ में यह मार्ग भले ही विष के समान कड़वा लगता हो, किन्तु अन्तत: यह अमृत में ही पर्यिवसित होता है। इसलिए सारथिका धर्म है कि रथ को योग्य मार्ग में, श्रेयमार्ग की ओर ले जाएं। अपने जीवन में जब श्रेय और प्रेय के बीच चयन करना हो तब क्यों प्रेय का त्याग करके श्रेय का चयन करना चाहिए इसकी समझ भी आवश्यक है। जीवन में जिस मूल्यों का पालन करना है, उन प्रेय मूल्य का क्या मूल्य है, वह भी जानने की आवश्यकता है। अपने जीवन का रथ योग्य मार्ग पर चले तो अन्त में अपने जीवन का ध्येय सिद्ध कर सकेंगे और यह मार्ग गीता हमें बताती है।

मानवता अपने जीवन का प्रथम धर्म है। मनुष्य में इतनी सम्भावना है कि वह मनुष्यत्व से भी एक कदम आगे बढ़कर देवत्व प्राप्त कर सकता है। यह कहा जा सकता है कि मनुष्यत्व प्रथम सोपान है और देवत्व दूसरा सोपान। देवत्व को प्राप्त करने का मार्ग भी गीता बताती है। इस तरह, जीवन का ध्येय और उस ध्येय की प्राप्ति का मार्ग यह दोनों भगवद्‌गीता बताती है।

गीता और मानवजीवन

इस जगत में किस प्रकार की संवादिता है, उसका दर्शन भगवान् कृष्ण गीता में कराते है। हम भी जगत का एक अंश होने से इस संवादिता में अपना सूर मिलाना चाहिए। बाह्य और आन्तरिक इन दोनों प्रकार की संवादिता स्थापित करके एक परिपक्व व्यक्तित्व प्राप्त करने के मार्ग का भगवान गीता में उपदेश देते हैं। मनुष्य जो कुछ भी प्राप्त करता है, उसका प्रभाव अन्य पर भी होता है। अत: कैसे कर्म करना, कैसे व्यवहार करना, जीवन में कौनसे मूल्यों का पालन करना, किस प्रकार के विचारों से युक्त होना, जिससे कि हम जो कुछ भी करे, उससे मुझे भी लाभ हो, साथ ही अन्य को भी लाभ पहुंचे; हम स्वयं का भी विकास करे और साथ ही अन्य के विकास में भी सहभागी बन सकें ऐसी सीख भी भगवान गीता में देते हैं। हम किस तरह अपने जीवन को सफल बना सकते हैं, किस प्रकार मनुष्य बन सकते है, मनुष्य में से देव किस तरह बन सकते है और जो हमें जीवन में अनमोल अवसर प्राप्त हुआ है, उसका कैसे श्रेष्ठ प्रयोग कर सकें, यह सब भगवान गीता में बताते हैं।

भगवान ने हमें मनुष्यदेह देकर एक अमूल्य अवसर प्रदान किया है। ऐसा श्रेष्ठ अवसर प्राप्त होने पर भी इसका उपयोग जो नहीं कर पाते है उसके बारे में ईशावास्य उपनिषद् बताता है कि वह आत्मघाती मनुष्य है। श्रीमद् भागवत में भी भगवान कहते हैं कि यह मनुष्यदेह एक सुन्दर नाव है। इस सुन्दर नाव का एक कर्णधार भी भगवान ने गुरुरूप में प्रदान किया है। साथ ही नाव उचित मार्ग पर जा सके उसके लिए भगवान बताते हैं कि मैं स्वयं अनुकुल वायु हूं।इस प्रकार वायु भी अनुकुल है, नाव का कर्णधार भी है औरन मानवदेह रूपी सुन्दर नाव भी प्राप्त है। ऐसी नाव और अन्य अनुकुलता सब प्राप्त होने पर भी यदि इस संसार को नहीं पार करते तो, अपने जीवन के ध्येय को सिद्ध नहीं कर लेते तो सही में आत्मघाती ही कहे जाएंगे। जीवन में किस प्रकार आतमघात करने से रुके, कैसे अपनी आत्मा का आदर करे, और आदर के साथ किस प्रकार जीवन को सार्थक एवं सफल बनाएं यह बोध भगवद् गीता में भगवान् श्रीकृष्ण प्रदान करते हैं।

– ३४ –

उत्तरकाशी
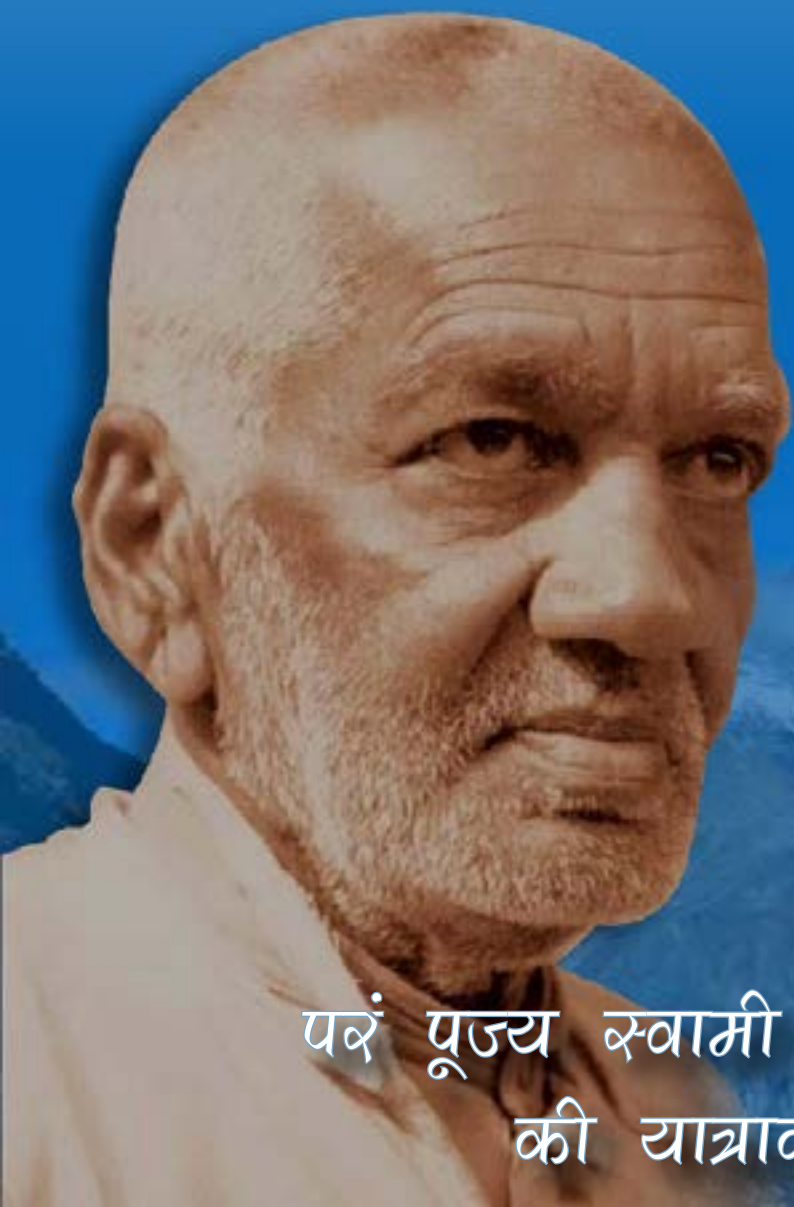
परं पूज्य स्वामी तपोवन महाराज
की यात्राके संस्मरण

जीवन्मुक्त

'मोनाल' नामक एक तरह के विचित्र विहंगमों ने, जो लाल मुर्गो के समान थे, अपने निवास स्थान पाषाण छिद्रों से बाहर निकल कर हमारे सामने आकाश में उडते हुए मानों अपने अतिथियों का अभिवादन पूर्वक स्वागत किया बहुत ही उन्नत तथा शीतल वनान्तरों में पाया जानेवाला यह विचित्र जीव है मोनाल पक्षी। गहरे रंगीले परों से निबिड़ रूप से ढके शरीर के साथ ये पक्षी कितने रमणीय लगते है। मोर और मोनाल अत्यन्त मनोहारी परों से युक्त हिमालय के दो विशिष्ट विहंगम है। इतिहासकारों का कहना है कि सिकन्दर मयूरों की सुंदरता पर मुग्ध होकर हिमालय प्रान्तों से मयूरों को पकडकर ग्रीस ले गये थे। लेकिन मोनाल की मोहक रूप सुन्दरता देखने का सौभाग्य यदि उन्हें मिलता तो उनका चित्त कितनी उत्कंठा से भर जाता? उच्च देशों में मोनाल और निम्न देशों में मयूर इस गिरिराज के सचमुच अमूल्य आभूषण है। हिमालय में यदि पन्द्रह सौ फुट के उपर मोर नही दिखायी देते, तो सात हजार फुट के नीचे मोनाल भी नही दिखायी पडते। कहा जाता है कि शिकारी लोग पंखो तथा माँस के लिए मोनालों को गोली चलाकर मार डालते है। अपने इस मार्गमें इधर उधर कई स्थानों पर हमने इन अलौकिक खगों को देखा था। सरोवर के किनारे विकसित मुख के
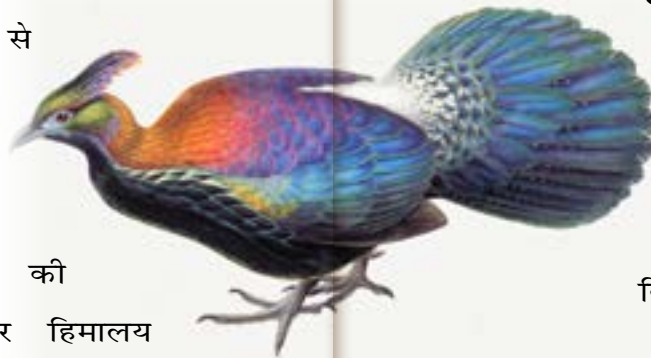
जीवन्मुक्त

साथ इन मित्रों ने सपत्नीक हमारा स्वागत किया था। इस पर मुझे असीम आनंद हुआ। किन्तु इस घोर विपिन में कस्तूरी मृग और व्याघ्र भल्लुकादियों ने दर्शन देकर हमारा स्वागत क्यों नही किया था? मेरा अनुमान है कि नववधू के सामन कस्तूरी मृग की लजीली तथा विनम्र प्रकृति ही इसकी उत्तरदायी है। वह लाज के मारे हमारे सामने नही आ सके। उधर अदम्य वीर्य पराक्रम के कारण किसीके सामने सिर न झुकानेवाले एक छत्राधिपति नृप के समान सारे वन पर शासन करनेवाले व्याघ्र की दर्पपूर्ण प्रकृति भी उत्तरदायी है। वह अहंकार के कारण हमारा स्वागत करने न आया होगा। फिर भी जिसके दर्शन की अभिलाषा में इतनी कष्टदायक यात्रा हमने की थी, उस महामहिमाशालिनी सरोदेवी ने गंभीरता की मूर्ति होकर भी मधुर मुस्कान के साथ हमारा स्वागत किया। इस पर अतीव कृतार्थ होकर भक्तिपूर्वक प्रणाम करते हुए हम उस देवी के निकट जा बैठे।

सायंकाल हुआ। सूर्य भगवान् की अरुण किरणों के फैल जाने से दिशाएँ अरुणिमा से भर गयी थी। सरोवर का स्वच्छ जल भी प्रतिबिम्ब को ग्रहण कर अरुणिम होकर दिव्य सुषमा संपत्ति के साथ शोभायमान था। चुंकि शीत असहनीय था, इसलिए पर्वतीय लोग लकडियाँ इकठ्ठी करके सारी रात आग जलाते रहे। रात के समय न जाने वहां विपिन के बीच से कैसी विलक्षण तथा दिव्य ध्वनियाँ सुनायी दे रही थी।

(श्री रामचरित मानस पर आधारित)
मनु और दशरथजी का चरित्र
– 03 –
धर्म तें बिरति जोग तें ग्याना।
ग्यान मोच्छप्रद बेद बखाना।।

श्री मनु और दशरथ चरित्र

स्मृति निर्माता मनु स्वयं ऐसा अनुभव करते हैं कि धर्म का यह परिणाम उनके जीवन में उदित नहीं हुआ है। अतः उनमें भले ही मानसिक असन्तोष का उदय न हुआ किन्तु बौद्धिक असन्तोष का उदय अवश्य हुआ। वृद्धावस्था तक शासन करने के पश्चात् भी जब सहज भाव से उनके हृदय में विषयों के प्रति विरक्ति का उदय नहीं हुआ, तबउन्होंने विचार के माध्यम से विषय-त्याग का संकन्प लिया। रोगी जब विषाय सेवने से हानि का अनुभव करता है तब वह उन्हें छोड़ने के लिए बाध्य हो जाता है। पर ऐसा स्वस्थ व्यक्ति भी हो सकता है, जिसमें किसी प्रकार के रोग अथवा दुर्बलता का उदय नहीं हुआ है, पर वह बुद्धिपूर्वक यह समझ लेता है कि अन्ततोगत्वा यह विषय दुःखदायी ही सिद्ध होंगे। इसलिए क्यों न बाध्यता से पहले ही इनका परित्याग कर दिया जाय। विषयों से स्वतः उन्हें दुःखानुभूति नहीं हुई। पर वे विचारपूर्वक उनकी दुःखरूपता का निर्णय करते हैं और उनके परित्याग का दृढ़ संकल्प कर लेते हैं। राज्यसत्ता पुत्र के हाथों में सौंपकर वे वन में तपस्या के लिए चले जाते हैं।

विवेकपूर्वक स्वीकार किया गया यह वैराग्य उन्हें साधना और तपस्या के चरम शिखर तक पहुंचा देता है। वे तपस्या के द्वारा शरीर को इतना सूखा देते हैं कि उनमें हड्डियां मात्र शेष रह जाती हैं। ईश्वर के साक्षात्कार के लिए शरीर को सुखा देना आवश्यक नहीं है। किन्तु उनकी इस कठिन तपस्या का उद्देश्य तपस्या के माध्यम से स्वयं के शरीर को विषय-विमुख कर देना चाहते हैं। वे इसमें पूरी तरह सफल भी हुए, वे अन्न और जल ही नहीं अपितु वायु का भी परित्याग कर दते हैं। कठिन साधना के पश्चात् भगवद्दर्शन का उनका लक्ष्य पूर्ण होता है। पहले आकाशवाणी के रूप में और बाद में प्रत्यक्ष साक्षात्कार करते हुए उन्हें प्रभु की कृपा की प्राप्ति होती है। ईश्वर उन्हें वरदान मांगने का आग्रह करते है और वे प्रभु से पुत्ररूप में अवतरित होने का अनुरोध करते हैं।

पौराणिक गाथा

हमें क्या चाहिए?

हमें क्या चाहिए?

एक बार शाम के समय एक बगीचेमें आसपास काफी चहल पहल थी। कुछ बच्चे लोग खेल रहे थे। कहीं योगासनादि चल रहे थे। कोई जोगिंग करने में व्यस्त था तो कहीं कोई प्रेमी युगल बैठे हुए थे। कहीं खाने पीने के स्टाल लगॆ हुए थे। उन सब के मध्य में एक महात्माजी एक पेड़ के नीचे हरी हरी घास में बैठे हुए थे। उनके चेहरे से नीरव शान्ति प्रसन्नता टपक रही थी जो उनके मन की गहराई को दीखा रही थी।

उन्हें असंग भाव से बैठे हुए देखकर एक युवक उनके सामने आकर बैठ गया। और महात्माजी से बातें करने लगा। कुछ उनके बारे में पूछने लगा कुछ अपने बारने में बताने लगा। साथ ही आसपास उनकी दृष्टि भी घूम रही थी। यह देखकर लग रहा था कि उन्हें किसी की प्रतीक्षा है। महात्माजी के पूछने पर उसने बताया कि 'हम कीसी की प्रतीक्षा कर रहे है, इसलिए सोचा कि चलो! थोड़ा समय आपके पास बिताएं, हमारा टाइम भी पास हो जाएगा और कुछ जानने को मिलेगा। उनकी बात महात्माजी मुस्कुराएं। युवक ने बातचीत करते हुए महात्माजी से पूछा कि 'महाराज! आप इतने सुन्दर मूल्यवान जगत को क्यों त्याग दिया? यहां कितने सुन्दर विषय भोग, मान प्रतिष्ठा वैभव आदि को कोई कैसे छोड़ सकता है?'

महात्माजी मात्र मुस्कुराएं, कुछ बोले नहीं। वह इन्तजार करने लगा कि अभी वे कुछ इस विषय में बताएंगे और प्रतीक्षा का समय भी पसार हो जाएगा।' किन्तु महात्माजी कुछ बोले नहीं, पूरे समय में असंगता से उनकी चेष्टाएं, चंचलता को देख रहे थे।

पूरे समय बात करते हुए उनके हाथ भी सतत व्यस्त थे। बगीचे की हरी भरी घास को वह तोड़ता जा रहा था। उतने में उनके प्रतीक्षा का समय पूरा हो गया और उसने महात्माजी से जाने की आज्ञा मांगी। और उठ़कर जैसे ही वह कपड़े झाड़कर जाने लगा तो महात्माजी ने उसे रोका, और रोककर कहा कि बेटे! इतने समय से मेहनत से जो तुमने अर्जन किया वह तो ले जाओ। युवा बोला कि, हम कुछ समझे नही! महातमा ने कहा कि कब से तुमने इतनी मेहनत से घास को तोड़कर जमा करते हुए इतना बडा ढेर लगा दिया है, औश्र उसे यहीं झाड़कर जा रहे हो! युवा बोला कि अरे! महाराज! आप कैसी मजाक कर रहे है? ये तो घास है। इसका कोई मूल्य थोडी होता है!'

महात्माजी ने कहा कि, जिस समय तुम्हें इस इस जगत के बारे में यह दीख जाएगा कि यह सब नश्वर है, उससे जीवन में हमारी जो मूलभूत प्यास है, उसका शमन नहीं हो सकता है! तब तुम्हें भी यह जगत भी घास जैसा ही तुच्छ दीखने लगेगा।' युवा को अपने प्रश्न का उत्तर मिल गया और उसकी आंखे खुल गई। अब उसके मन में जाने अन्जाने मन्थन आरम्भ हो गया कि यह सब क्षणिक व नश्वर है, उसके पीछे हम अपना जीवन पूरा दाव पर लगा रहे है, किन्तु हम यही नहीं जानते है कि हमें वास्तव में क्या चाहिए!

Mission & Ashram News

Bringing Love & Light
in the lives of all with the
Knowledge of Self

मिशन समाचार

गीता ज्ञान यज्ञ, बड़ौदा

पू. स्वामिनी अमितानन्दजी द्वारा

आश्रम समाचार

गीता कक्षाएं – प्रतिदिन

आश्रम समाचार

गीता साप्ताहिक कक्षाएं

आश्रम समाचार

गणपति सभागृह उद्घाटन

आश्रम समाचार

गणपति सभागृह उद्घाटन

आश्रम समाचार

गणपति सभागृह उद्घाटन

आश्रम समाचार

गणपति सभागृह उद्घाटन

आश्रम समाचार

संन्यास दीक्षादिन पर पूजा

पू. स्वामिनी समतानन्दजी

आश्रम समाचार

संन्यास दीक्षा दिन

पूजामूलं गुरो:पदम

आश्रम समाचार

संन्यास दीक्षादिन

आशीर्वाद एवं शुभाशीष

आश्रम समाचार

श्री गंगेश्वर महादेव अभिषेक
गोपाल सचदेव एवं परिवार द्वारा

आश्रम समाचार

जन्मदिन पर शुभाशीष

आश्रम समाचार

गणपति सभागृह उद्घाटन

आश्रम समाचार

गणपति सभागृह उद्घाटन
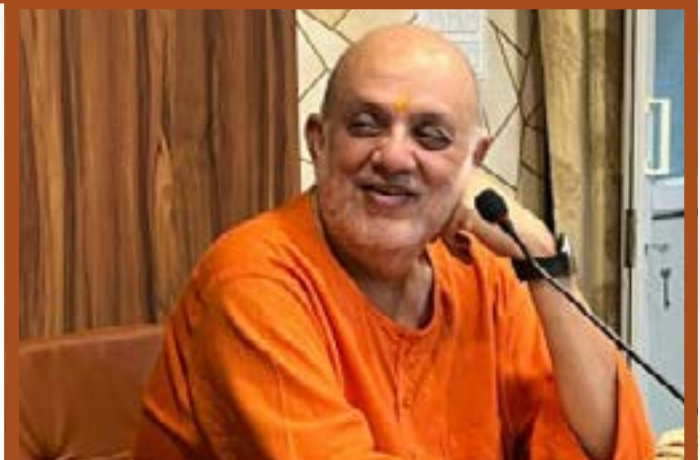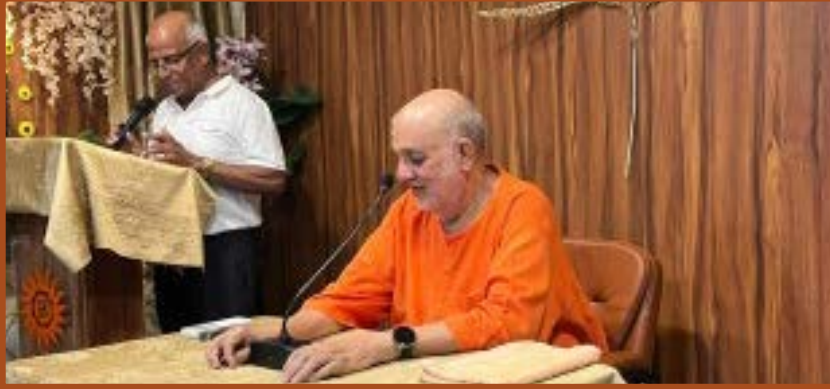
आश्रम / मिशन कार्यक्रम

शार्ट वेदान्त कोर्स

दि. 18 जुलाई से 16 अगस्त

वेदान्त आश्रम, इन्दौर

पूज्य गुरुजी एवं आश्रम के महात्मा गण

श्रीमद् भगवद् गीता
(शांकर भाष्य समेत) नित्य कक्षाएं

प्रतिदिन प्रातः 8.30 बजे से (मंगल से शनिवार)

वेदान्त आश्रम, इन्दौर

पूज्य गुरुजी स्वामी आत्मानन्दजी

श्रीमद् भगवद् गीता
साप्ताहिक कक्षाएं / प्रति शनिवार

प्रति शनिवार सायं 5.00 बजे से

वेदान्त आश्रम, इन्दौर

पूज्य स्वामिनी अमितानन्दजी

INTERNET

Talks on (by P. Guruji) :

Video Pravachans on YouTube Channel

~ Gita Ch. 06 (MIT)

~ Gita Ch. 12

~ Gita Ch. 17

~ Sadhna Panchakam

~ Drig-Drushya Vivek

~ Upadesh Saar

~ Atma Bodha Pravachan

- Sundar Kand Pravachan

~ Prerak Kahaniya

- Ekshloki Pravachan

~ Sampoorna Gita Pravachan

- Kathopanishad Pravachan

- Shiva Mahimna Pravachan

- Hanuman Chalisa

~ Laghu Vakya Vrittu (Guj)

~ Gita Ch. 5 (Guj)

~ Gita Upodghat Bhashya (Guj)

Vedanta Ashram YouTube Channel

Vedanta & Dharma Shastra Group

Talks on Internet :

Audio Pravachans

~ Gita Ch. 06

~ Complete Gita Pravachans

~ Gita Ch. 05

~ Nataka Deep

~ Sadhna Panchakam

~ Drig Drushya Vivek

~Upadesh Saar

~ Prerak Kahaniya

~ Sampoorna Gita Pravachan

~ Atmabodha Lessons

Monthly eZines

~ Vedanta Piyush - May '23

~ Vedanta Sandesh - June '23